

बी0 एड0 – दूरस्थ शिक्षा

स्व-अनुदेशात्मक सामग्री

खण्ड – 4

प्रश्न पत्र-3 (तृतीय)

बी0एड0 प्रथम वर्ष

सीखना और सिखाना

मध्यप्रदेश भोज (मुक्त) विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.)

खण्ड-4 सीखने वालों के लिए शिक्षण और उसका विस्तार

इकाई-1 शिक्षक केन्द्रित और विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण एवं
उपागम

इकाई-2 शिक्षण अधिगम के विभिन्न संदर्भ

इकाई लेखक

डॉ0 चंदा मोदी

सहायक प्राध्यापक,
विक्टोरिया कॉलेज ऑफ एजुकेशन, भोपाल

**इकाई-1 शिक्षक केन्द्रित और विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण एवं उपागम
संरचना।**

- 1.1 परिचय।
- 1.2 उद्देश्य
- 1.3 व्याख्यान विधि।
- 1.4 प्रदर्शन विधि।
 - 1.4.1 अध्यापक द्वारा प्रदर्शन विधि से पढ़ाने के पद।
 - 1.4.2 अध्यापक द्वारा प्रदर्शन विधि से पढ़ाने का तरीका।
 - 1.4.3 प्रदर्शन विधि का महत्व
- 1.5 व्याख्यान तथा प्रदर्शन विधि।
- 1.6 विचार विमर्श।
 - 1.6.1 विचार विमर्श पद्धति के पद।
 - 1.6.2 अध्यापक द्वारा विचार विमर्श पद्धति से पढ़ाने का तरीका।
 - 1.6.3 सीमाएं।
 - 1.6.4 सुझाव
- 1.7 योजना विधि।
 - 1.7.1 योजना विधि के उद्देश्य।
 - 1.7.2 कार्य योजना।
- 1.8 खेल व खेल प्रणाली।
 - 1.8.1 खेल खिलाना।
 - 1.8.2 खेल के सिद्धांत।
 - 1.8.3 शिक्षा में खेल प्रणाली।
 - 1.8.4 खेल विधि पर आधारित शिक्षण पद्धतियाँ।
- 1.9 खोज विधि।
 - 1.9.1 खोज विधि से छात्रों को पढ़ाने की विधि।
 - 1.9.2 खोज विधि के गुण।
- 1.10 रचनावाद उपागम।
- 1.11 पृच्छा विधि।
 - 1.11.1 पृच्छा विधि में, काम में आने वाले उपकरण।

- 1.12 आगमन विधि ।
 - 1.12.1 प्रक्रिया ।
 - 1.12.2 महत्व ।
- 1.13 निगमन विधि ।
 - 1.13.1 अध्यापकों को सुझाव ।
 - 1.13.2 निगमन विधि का महत्व ।
 - 1.13.3 विद्यार्थियों से आगमन एवं निगमन विधि में अंतर करवाना ।
- 1.14 इकाई सारांश ।
- 1.15 दीर्घ एवं लघु प्रश्न ।
- 1.16 अपनी प्रगति का आंकलन कीजिए ।
- 1.17 संदर्भ ग्रन्थ

1.1 परिचय— शिक्षक केन्द्रित और विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षण उपागम खण्ड की पहली इकाई है। इस इकाई में हम शिक्षण की विभिन्न विधियों का स्पष्ट रूप से वर्णन करेंगे और यह देखेंगे कि इससे विद्यार्थियों को क्या-क्या लाभ होंगे इसके अतिरिक्त शिक्षण के आगमन निगम और रचनावाद के बारे में विस्तार से वर्णन करेंगे।

1.2 उद्देश्य — इस इकाई का अध्ययन करने के बाद हम।

- मनोविज्ञान की विभिन्न शिक्षण विधियों को समझ सकेंगे।
- मनोविज्ञान की विभिन्न विधियों के साथ उसके आयामों का वर्णन कर सकेंगे।
- व्याख्यान और प्रदर्शन विधि से जुड़ी समस्याओं को समझ सकेंगे।
- रचनावाद उपागम से विद्यार्थियों को लाभ मिल सकेगा।

मनोविज्ञान की शिक्षण-विधियाँ

शिक्षण-विधि का अर्थ— कक्षा के वातावरण के अन्तर्गत छात्रों के सीखने तथा शिक्षक क्रिया से सम्बन्धित जो कार्य किये जाते हैं, उनके ज्ञान के आधार पर ही विधि का स्पष्टीकरण होता है। शिक्षण विधि ही बालकों की शक्ति का विकास करती है, अतः अध्यापक को शिक्षण से पूर्व विधि समझना आवश्यक है कि इसका क्या अर्थ है।

थॉर्नडाइक ने कहा है कि—“एक ही कक्षा में उच्च कोटि तथा निम्न कोटि के बालकों में बड़ा अन्तर होता है। उच्च कोटि के बालक एक ही समय में निम्न कोटि के बालकों से 6 गुना अधिक सीखते हैं या एक ही कार्य को उच्च बालक निम्न की अपेक्षा $1/6$ समय में सीख सकते हैं।”

सीखने की स्थिति में ही सीखने की क्रिया क्रियान्वित होती है। अतः सीखने का वातावरण बनाने के लिए अध्यापक को निम्नलिखित बातें प्रयोग में लानी चाहिए।

- प्रेरणा देना।
- समस्या प्रस्तुत करना।
- उदाहरण देना।

- परख का प्रयोग।
- छात्रों की क्रिया को दिशा देना।
- छात्रों की सहायता से पाठ्य सामग्री का संगठन तथा निष्कर्ष निकालना।
- मूल्यांकन

1.3 व्याख्यान विधि (LECTURE METHOD)

व्याख्यान विधि का प्रयोग हायर सेकण्डरी से ऊँची कक्षाओं में उपयुक्त रहता है। इसके सम्पादन के लिए अध्यापक अच्छे प्रश्नों का चयन कर व्याख्यान प्रारंभ करता है और उन्हीं के आधार पर पाठ आगे बढ़ाता जाता है। शिक्षक बालक को व्याख्यान देकर सूत्र, सिद्धांत एवं नियम बता देता है। इस विधि में अध्यापक के साथ छात्र भी पूरी तरह सक्रिय रहते हैं, जिससे छात्रों के ज्ञान में वृद्धि होती है। इस विधि के निम्नलिखित गुण हैं। इस विधि का प्रयोग सरल होता है। उच्च कक्षाओं के लिए इस विधि का प्रयोग ठीक रहता है। इस विधि द्वारा अधिक पाठ्य-वस्तु को कम समय में ही पढ़ाया जा सकता है। व्याख्यान के द्वारा विचारों का क्रम श्रृंखलाबद्ध होता जाता है और बालक को उस प्रकरण के बारे में पूर्ण ज्ञान दे दिया जाता है।

1.4 प्रदर्शन विधि (Demonstration Method)

व्याख्यान विधि में शिक्षक भाषण द्वारा छात्रों को ज्ञान प्रदान करता है, किन्तु मनोविज्ञान जैसे विषय में कोरे भाषण मात्र से ही विषय वस्तु छात्रों को नहीं समझाई जा सकती, इस हेतु क्रियात्मक प्रयोगों की आवश्यकता पड़ती है। इस विधि में शिक्षक कुछ प्रयोगों, उपकरणों एवं उनकी कार्य विधि का प्रदर्शन करता है। उदाहरण के लिए मनोविज्ञान के विकास क्रम का चार्ट दिखाता है। इस प्रकार जो बात व्याख्यान विधि में शब्दों के माध्यम से कही जाती है, वह प्रदर्शन विधि में प्रतिदर्श उपकरण प्रयोग को दिखाकर आसानी से व्यक्त की जा सकती है।

प्रदर्शन करने पर धारणा सुग्राही होती है क्योंकि चीज को देखकर सम्बन्ध में समझाना, सुनकर समझने की अपेक्षा अधिक आसान रहता है।

इस प्रकार किसी समस्या को सुलझाने, विषय को स्पष्ट करने, परिणामों की तुलना करने, व्यावहारिक प्रयोग करने, बालकों की बोध क्षमता का पता लगाने विधि एवम् युक्ति को दृष्टव्य बनाने एवं वस्तुओं और नमूनों को प्रदर्शित करने की आवश्यकता होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति प्रदर्शन विधि द्वारा सम्भव होती है।

अध्यापक द्वारा प्रदर्शन विधि से पढ़ाने के पद।

प्रयोग प्रदर्शन विधि के मुख्य चरण अथवा पद निम्नांकित हैं –

1. योजना व तैयारी
2. पाठ का प्रस्तुतीकरण
3. शिक्षण
4. प्रयोगीकरण
5. श्याम-पट कार्य
6. प्रतिलेखन व निरीक्षण

प्रदर्शन विधि के उपर्युक्त चरणों को हम निम्न प्रकार समझ सकते हैं।

(1) योजना व तैयारी – प्रदर्शन विधि का प्रयोग करने से पूर्व शिक्षक को एक योजना बना लेनी चाहिए। तैयारी करते समय उसे निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए।

1. विषय-वस्तु
2. पाठ-संकेत- इसमें पूछे जाने वाले प्रश्न भी सम्मिलित होने चाहिए।
3. आवश्यक उपकरणों का संकलन।

संबंधित विषय का पूर्ण परिचय होने पर श्री शिक्षक को छात्रों की पाठ्य पुस्तकों में से संबंधित पृष्ठ अवश्य ही पढ़ने चाहिए, ताकि वह सम्बन्धित विषय पर केन्द्रित रह सके।

(2) पाठ का प्रस्तुतीकरण– शिक्षक द्वारा पाठ को समस्यात्मक ढंग से छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए, ताकि वे सम्बंधित विषय के महत्व को समझ सकें। शिक्षक को किसी व्यक्तिगत अनुभव अथवा घटना या किसी, रोचक कहानी द्वारा भी पाठ आरम्भ किया जा सकता है। केवल आरम्भ में ही नहीं, बल्कि शिक्षक को चाहिए कि वह अपने निरंतर उत्साह के द्वारा पूरे पाठ के दौरान छात्रों के उत्साह व रुचि को बनाये रखे। प्रत्येक उचित अवसर पर उसे ऐसे प्रयोग दिखाने चाहिए जिसके प्रभाव से छात्रों के ध्यान को आकर्षित किया जा सके।

(3) शिक्षण– यदि पाठ का सम्बन्ध मनोविज्ञान की किसी विशेष शाखा के साथ हो तो एक अध्ययनशील तथा सुविज्ञ शिक्षक मनोविज्ञान की सभी शाखाओं में से दृष्टांत देगा। इसके अलावा जहाँ व्यावहारिक हो वहाँ वैज्ञानिकों के नाम व उनकी सूचनाओं का भी उल्लेख करना चाहिए। जहाँ तक सम्भव हो शिक्षण सुविचारित एवं उचित प्रश्नों द्वारा होना चाहिए। प्रश्नों का क्रम इस प्रकार हो कि प्रत्येक प्रश्न का उत्तर आसान सही एवं स्पष्ट हो।

(4) प्रयोगीकरण— प्रदर्शन मेज पर किया गया काम छात्रों के लिए स्तर का होना चाहिए। प्रयोग सरल और तेज गति से चलने चाहिए। जटिल उपकरण द्वारा लम्बे समय तक चलने वाले प्रयोग से प्रदर्शन का उद्देश्य नष्ट हो जाता है। मनोवैज्ञानिक प्रयोगों का प्रदर्शन पाठ के दौरान उचित समय पर ही किया जाना चाहिए। उपकरणों को उसी कम में रखना चाहिए जिस कम में उनका प्रयोग करना हो। प्रदर्शित उपकरणों को सम्भाल कर रखना बुद्धिमता है, ताकि उन्हें फिर से प्रयोग में लाया जा सके।

(5) श्याम पट कार्य — प्रदर्शन पाठ में श्याम-पट बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है। मुख्य रूप से इसका प्रयोग निम्न दो उद्देश्यों हेतु किया जाता है —

- (अ) महत्वपूर्ण बिन्दुओं एवं सिद्धांतों को संक्षिप्त रूप में लिखना।
- (ब) आवश्यक रेखाचित्र व रेखा आकृतियों बनाना।

श्याम-पट को सुविधापूर्वक दो भागों में विभक्त कर लेना चाहिए। दायें भाग को रेखाचित्रों तथा रेखा आकृतियों के लिए सुरक्षित रखना चाहिए। दोहरी रेखा की बजाय इकहरी रेखा का प्रयोग कर चित्र बनाने चाहिए। रेखाचित्रों के प्रत्येक भाग पर लेबल लगाना चाहिए। लेबल लिखते समय सुन्दर एवं स्पष्ट अक्षरों का प्रयोग करना चाहिए। लेबल मोटे अक्षरों में लिखे जाने चाहिए।

(6) प्रतिलेखन व निरीक्षण— जब तक छात्र श्याम-पट के संक्षिप्त सार तथा रेखाचित्रों को अपनी-अपनी कापियों में लिख नहीं लेते, तब तक प्रदर्शन पाठ अधूरा रहेगा। श्याम-पट पर प्रयुक्त भाषा छात्रों की अपनी होती है। इसलिए उन संक्षिप्त विवरणों को लिख लेने में किसी प्रकार की हानि नहीं।

छात्रों का मस्तिष्क इतना विकसित नहीं होता है कि वे अपने आप नोट्स व रेखाचित्र बना सकें, इसलिए उन्हें श्याम पट पर से ही नकल कर लेनी चाहिए। शिक्षक को चाहिए कि वह बार-बार छात्रों के पास पहुंचकर यह देखे कि श्याम पट के संक्षिप्त विवरण तथा रेखाचित्रों को अपनी कापियों में उचित ढंग से लिख रहे हैं अथवा नहीं।

1.4.2 अध्यापक द्वारा प्रदर्शन विधि से पढ़ाने का तरीका —

(1) स्पष्ट व स्थाई ज्ञान— प्रदर्शन विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान अधिक स्पष्ट एवं स्थाई होता है। छात्र प्रत्येक वस्तु की रचना, कार्य प्रणाली इत्यादि को प्रत्यक्ष रूप से देखता है। फलतः उसे विषय-वस्तु की पूर्ण जानकारी हो जाती है। इस प्रकार प्राप्त ज्ञान उसके मस्तिष्क पटल पर अधिक स्थाई होता है।

(2) सक्रिय वातावरण— इस विधि में व्याख्यान विधि की भाँति छात्र निष्क्रिय श्रोता नहीं रहते, बल्कि छात्र व शिक्षक पाठ के दौरान सक्रिय योगदान देते हैं। शिक्षक भी छात्रों को प्रयोग—प्रदर्शन एवं उचित व्याख्यान द्वारा सक्रिय बनाये रखता है।

(3) मानसिक शक्तियों का विकास— प्रदर्शन विधि द्वारा शिक्षण से छात्रों की मानसिक शक्तियों का विकास आसानी से किया जा सकता है।

(4) प्रयोगात्मक प्रवृत्ति का विकास— इस विधि के प्रयोग से छात्रों में प्रयोग के प्रति रुचि जाग्रत होती है, फलतः उसमें प्रयोगात्मक प्रवृत्ति का विकास होता है।

(5) सर्वोत्तम एवम् सस्ती विधि— प्रयोग—प्रदर्शन विधि मनोविज्ञान—शिक्षण की विधियों में सर्वोत्तम विधि हैं तथा इसमें कम साधनों की आवश्यकता होने के कारण यह विधि मितव्ययी भी है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यह शिक्षण की एक अत्यन्त उपयोगी विधि है क्योंकि इसमें शिक्षण और शिक्षार्थी में एक प्रवाह रहता है, क्योंकि इसमें अमूर्त को मूर्त रूप में प्रदर्शित किया जाता है। अतः इसके द्वारा यथार्थ शिक्षण होता है।

1.4.3 प्रयोग प्रदर्शन विधि का महत्व —

जॉनसन के मानुसार—“ छोटी कक्षाओं में मनोविज्ञान के लिए प्रयोग—प्रदर्शन विधि प्रयोगशाला विधि से अधिक महत्वपूर्ण एवम् कम खर्चीली है।”

मनोविज्ञान विषय के शिक्षण हेतु यह सर्वाधिक व्यावहारिक एवम् उपयोगी विधि है। इसका मुख्य स्तर यह है कि छात्र जो कुछ भी सीखे प्रयोग के आधार पर सीखे। उच्च प्राथमिक स्तर पर प्रयोग प्रदर्शन विधि का प्रयोग अनिवार्य एवं उपयुक्त है।

इस विधि में शिक्षक पाठ्य विषय पढ़ाने के साथ—साथ सम्बन्धित प्रयोग भी स्वयं करके दिखाता है। छात्र अपने स्थान पर बैठे—बैठे उपकरणों एवं प्रयोगों को देखता रहता है। इस प्रकार वह विषय—वस्तु को सुनता व देखता है। फलतः अधिगम प्रभावशाली होता है। छात्रों को प्रदर्शन के संबंध में याद भी अधिक दिनांक तक रहता है।

1.5 व्याख्यान तथा प्रदर्शन

(LECTURE & Demonstration)

कक्षा में अध्यापक छात्रों को व्याख्यान विधि द्वारा पढ़ाते हैं। व्याख्यान में छात्र अध्यापक का व्याख्यान सुनते हैं। कुछ दिन तक तो वह याद रहता है, परन्तु धीरे—धीरे वह स्मृति में नहीं रहता है।

यदि कक्षा में छात्रों को व्याख्यान विधि के साथ-साथ कुछ-कुछ चीजों का प्रदर्शन भी करते रहे – जैसे चार्ट मॉडल या स्मार्ट क्लास में पीपीटी फिल्म स्ट्रिप का सहारा लेकर पढ़ाया जाता है, तो चीजें विद्यार्थियों की स्मृति पटल पर अंकित हो जाती हैं। परीक्षा में जैसे ही इस तरह के प्रश्न पूछे जाते हैं। विद्यार्थी उन चीजों को स्मृति के आधार पर लिख लेते हैं, इससे उन्हें लिखने में सुविधा होती है। कहते हैं कि आँख से देखी हुई चीज अधिकतर याद रहती है, इसलिए व्याख्यान विधि के साथ प्रदर्शन विधि के साथ जोड़कर पढ़ाया जाये।

उदाहरण— विद्यार्थियों द्वारा पाठ योजना बनाते एवं क्लास में पढ़ाते समय टीचिंग एड्स की आवश्यकता होती है। बिना टीचिंग एड्स के पाठ को रोचक, सुरुचि पूर्ण एवं ज्ञान वर्धक नहीं बनाया जा सकता। टीचिंग एड्स (समग्री) से पढ़ाये गये पाठ का महत्व दुगुना हो जाता है।

अध्यापक के लिए क्रिया-कलाप

विचार विमर्श द्वारा विद्यालय के किन्हीं पाँच छात्रों के अभिभावकों से मिलकर निम्न जानकारी एकत्रित करें।

विद्यार्थी का नाम	कक्षा	पिता का नाम	पिछले सत्र में कितने अभिभावक मीटिंग में सम्मिलित हुए	कितने विषयों पर चर्चा हुई	सुधार
राम	6	श्रीकांत	7	गणित विषय निम्न उपलब्धि	उपलब्धि में सुधार

1.6 विचार-विमर्श पद्धति (Discussion Method)

विचार-विमर्श पूर्णतया प्रजातान्त्रिक सिद्धांतों पर आधारित है। विचार-विमर्श कोई व्यर्थ का वाद-विवाद या एक समूह में बैठे व्यक्तियों द्वारा एक-दूसरे पर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के औचित्य से किया जाने वाला तर्क-वितर्क नहीं है, अपितु विचार-विमर्श शिष्ट, तार्किक एवं ज्ञानयुक्त विचारों का आदान-प्रदान है, जो कि सुनियोजित रूप से किसी प्रकरण या समस्या से सम्बन्धित सभी पक्षों पर उसका निष्कर्ष ही नहीं अपितु एक सोद्देश्य प्रक्रिया है, जो कि कुछ उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु यथा सम्भव कम से कम कलह एवं कटुता के साथ सम्पादित की जाती है।

1.6.1 विचार-विमर्श पद्धति के पद-विचार-विमर्श पद्धति के चार पद हैं –

1. विषय-वस्तु का चयन।
2. विचार-विमर्श हेतु तैयारियाँ
3. संचालन
4. मूल्यांकन

1. विषय का चयन— विचार-विमर्श के लिए विषय का चयन करना बहुत महत्वपूर्ण कार्य है क्योंकि विषय आदि अच्छा होगा तो अधिक से अधिक छात्र विचार-विमर्श में बढ़-चढ़ कर भाग लें अन्यथा रुचि के अभाव में विचार-विमर्श आगे बढ़ना ही कठिन हो जाता है। अतः विषय के चयन में ध्यान रखना चाहिए कि –

(अ) नियम छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल हो ताकि छात्र उस पर विचार-विमर्श कर सकें।

(ब) विषय ऐसा होना चाहिए जिस पर कि विचार-विमर्श किया जा सके। मनोविज्ञान की प्रत्येक विषय वस्तुतः ऐसी नहीं होती जिस पर विचार-विमर्श किया जा सके अपितु विषय-वस्तु में जो भाग विचार के उपयुक्त हो उस पर ही विचार-विमर्श कराया जाये।

2. विचार-विमर्श हेतु तैयारियाँ – विचार-विमर्श प्रारंभ करने से पूर्व छात्रों को भी विचार-विमर्श के लिए तैयार करना होता है क्योंकि जब तक छात्र पूरी तैयारी के साथ नहीं आते, विचार-विमर्श में ठीक से भाग नहीं ले सकते। अतः अध्यापक का कार्य होता है कि वह छात्रों को विषय की प्रकृति, आवश्यकता एवं उसकी उपयोगिता से परिचित कराये तथा छात्रों को यह भी बताना चाहिए कि वह विषय पर और अधिक सामग्री किन-किन सन्दर्भों तथा स्रोतों से इकट्ठी कर सकते हैं तथा छात्रों को विचार-विमर्श के नियमों से अवगत कराना चाहिए।

3. विचार-विमर्श का संचालन – विचार-विमर्श का संचालन यदि ठीक से न किया जाये तो निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता। अतः जब विचार-विमर्श चल रहा हो तो अध्यापक को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

1. यह देखना कि विचार-विमर्श में कुछ ही छात्रों का एकाधिकार न हो जाये।
2. जो छात्र बोल न रहे हों उन्हें बोलने के लिए प्रेरित किया जाये।
3. विचार विमर्श निर्धारित उद्देश्यों की ओर ले जाना चाहिए।
4. छात्र जब किन्हीं विशेष तथ्यों की व्याख्या न कर पायें तो अध्यापक को करनी चाहिए।
5. विचार-विमर्श में वैमनष्य भाव न आने पाये।
6. एक समय में एक ही छात्र बोल।
7. अन्त में, विचार-विमर्श का सारांश अवश्य प्रस्तुत किया जाये।

विचार-विमर्श की संचालन व्यवस्था दो प्रकार से की जा सकती है – (1) छोटे-छोटे समूहों में कक्षा को बँट कर और (2) पूरी कक्षा का एक ही समूह बनाकर।

4. विचार-विमर्श का मूल्यांकन— चाहे जिस विधि का प्रयोग किया जाये, शिक्षण का उद्देश्य छात्रों में अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन लाना होता है। अतः विचार-विमर्श का मूल्यांकन भी उद्देश्यों के प्ररिपेक्ष्य में ही होना चाहिए। यदि उद्देश्यों को पूरी तरह से प्राप्त नहीं किया जा सकता तो उसके कारणों की खोज करनी चाहिए कि विचार-विमर्श में क्या कमी रही कि उद्देश्य प्राप्त नहीं किये जा सके। इसके अतिरिक्त यह भी देखना चाहिए कि विचार-विमर्श में क्या-क्या कठिनाईयाँ आयी तथा क्या-क्या कमियाँ रही जिससे उन्हें अगले विचार-विमर्श में दूर किया जा सके।

1.6.2 अध्यापक द्वारा विचार-विमर्श पद्धति द्वारा पढ़ाने का तरीका –

1. इस पद्धति में छात्र कक्षा के सक्रिय सदस्य रहते हैं।
2. विचार-विमर्श पद्धति से छात्रों में चिन्तन तथा तर्क-शक्ति का विकास होता है।
3. विचार-विमर्श पद्धति स्वतंत्र अध्ययन पर बल देती है।
4. विचार-विमर्श पद्धति सिद्धांत पर आधारित है।
5. यह पद्धति छात्रों को विषय वस्तु का चयन तथा संगठन करना सिखाती है।
6. छात्रों में अपने विचारों को सुस्पष्ट रूप से प्रस्तुत करने की योग्यता का

विकास होता है।

7. छात्रों में एक दूसरे की भावनाओं का आदर करने तथा परस्पर विरोधी विचारों के सह अस्तित्व के मूल्य का विकास होता है।

1.6.3 विचार-विमर्श पद्धति की सीमायें-

1. इस विधि से अध्ययन करने में समय अधिक लगता है।
2. विषय-वस्तु से सभी भागों का अध्ययन इस विधि से नहीं किया जा सकता।
3. विचार-विमर्श का संचालन ठीक न होने पर कुछ ही छात्रों का एकाधिकार हो जाता है।
4. निरर्थक बातों पर भी विचार-विमर्श हो जाता है, जिससे समय नष्ट होता है।

1.6.4 सुझाव-

1. विचार-विमर्श हेतु रुचिकर एवं ऐसे विषय लिये जायें जिन पर छात्र आसानी से तथ्य संग्रह कर सकें।
2. विचार-विमर्श की पूरी तरह से तैयारी की जाये।
3. विचार-विमर्श के संचालन में यह देखा जाये कि विचार-विमर्श उददेश्योन्मुखी रहे।
4. सभी छात्रों को बोलने के लिये प्रेरित किया जाये।
5. विचार विमर्श का मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ तरीके से किया जाये।

1.7 प्रायोजना विधि (Project Method)

प्रायोजना विधि के प्रवर्तक विलियम किलपैट्रिक थे। किलपैट्रिक प्रयोजनावादी हैं तथा शिक्षा को सामाजिक जीवन से जोड़ने के पक्ष में हैं। शिक्षा को व्यावहारिक जीवन से जोड़ने के लिए किलपैट्रिक की यह विधि बहुत उपयोगी है। किलपैट्रिक ने इस सम्बन्ध में कहा है कि-‘हम चाहते हैं कि शिक्षा वास्तविक जीवन की गहराई में प्रवेश करें, केवल सामाजिक जीवन में ही नहीं, वरन् उस उत्तम जीवन में, जिसकी हम आशा करते हैं।’

प्रायोजना विधि की कई परिभाषाएं भिन्न-भिन्न शैली में विद्वानों द्वारा दी गई हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. **वेलार्ड के अनुसार** – “प्रोजेक्ट यथार्थजीवन का ही एक भाग है, जो विद्यालय में प्रयोग किया जाता है।”
2. **पार्कर के अनुसार**– “प्रोजेक्ट कार्य की एक इकाई है, जिससे छात्रों को कार्य की योजना और सम्पन्नता के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है।”
3. **किलपैट्रिक के अनुसार**– “प्रायोजना वह उद्देश्यपूर्ण कार्य होता है जो पूर्ण संलग्ना के साथ सामाजिक वातावरण में किया जाय।”
4. **एटीवेन्शन के अनुसार**– “प्रायोजना एक समस्यामूलककार्य है, जो स्वाभाविक स्थिति में प्रयोग किया जाता है।”

अभ्याष के लिए क्रिया-कलाप ।

समूह बनाकर कक्षा में अनुशासन बनाए रखने की योजना बनायें।

[illegible]

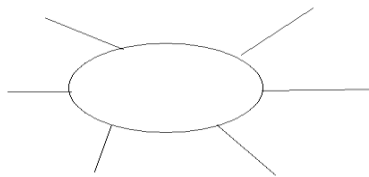
1.7.1 प्रायोजना विधि के उद्देश्य—

प्रायोजन विधि निम्नलिखित उद्देश्यों पर आधारित है —

1. **उद्देश्यपूर्ण कार्य—** प्रायोजना का कुछ-न-कुछ उद्देश्य अवश्य होता है। अध्यापक बालक के सम्मुख उद्देश्यपूर्ण कार्य प्रस्तुत करता है।
2. **सामाजिकता की भावना का विकास —** इस पद्धति में बालकों को उन क्रियाओं को करने के अवसर प्रदान किये जाते हैं, जिनमें कि उनमें सामाजिकता की भावना का विकास हो सके।
3. **क्रियाशीलता—** इस विधि में क्रिया को प्रमुखता दी जाती है। अतः यह क्रियाशीलता का सिद्धांत 'स्वयं करके' विधि पर आधारित है। बालक का सीखना इसी विधि पर आधारित होता है, इसमें वह पूर्णतः सक्रिय रहता है।
4. **उपयोगिता—** बालक उपयोगी कार्यों में विशेष रुचि भी लेते हैं तथा उन्हें शीघ्र कर भी लेते हैं। अतः प्रायोजना का भी उपयोगी होना आवश्यक है।
5. **यथार्थता —** इसके प्रयोग से वास्तविक एवं उपयोगी ज्ञान प्राप्त होता है। बालक को प्रदान किये जाने वाले समस्यात्मक कार्य वास्तविक होने चाहिए। क्योंकि वास्तविक जीवन की समस्याओं को वे शीघ्र रुचि से हल कर लेते हैं।
6. **रोचकता—** इस प्रणाली में प्रायोजना का कार्य बालक स्वयं करते हैं। अपने इस कार्य में उन्हें रुचि होती है। बालकों के सामने समस्याएं भी रुचिपूर्ण प्रस्तुत करनी चाहिए।
7. **स्वतंत्रता—** इस प्रणाली में बालकों को स्वयं अपना कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता होती है।

1.7.2 प्रायोजना विधि की कार्य योजना

प्रायोजना विधि को प्रयोग में लाने के लिए निम्नलिखित पदों का प्रयोग किया जाता है।



1. **परिस्थिति उत्पन्न करना**— इस पद्धति में बालक को स्वयं प्रयोजन चुनने के अवसर प्रदान किये जाते हैं। अतः शिक्षक इस प्रकार की परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है, जिससे बालकों में उचित प्रायोजन चुनने में रुचि जाग्रत हो सके।
2. **योजना चुनना** — बालक स्वयं प्रायोजना का चुनाव करते हैं। शिक्षक मार्ग-दर्शक का कार्य करता है। छात्रों का मत लेकर ही शिक्षक प्रायोजना को स्वीकार करते हैं।
3. **कार्यक्रम बनाना**— इस चरण के अन्तर्गत छात्र कार्यक्रम का निर्माण करते हैं। शिक्षक प्रायोजना के कार्यक्रम निर्माण के लिए वाद-विवाद के अवसर प्रदान करते हैं। आवश्यकतानुसार वह छात्रों का पथ-प्रदर्शन भी करता है।
4. **कार्यक्रम क्रियान्वित करना**— इस पद में छात्र स्वयं कार्य करते हैं, बालक क्रिया द्वारा सीखता है तथा वह विभिन्न विषयों के सम्बन्ध में ज्ञान ग्रहण करता है। अध्यापक प्रायोजना हेतु मार्ग-दर्शन ही देता है, स्वयं कोई कार्य नहीं करता।
5. **कार्य का लेखा** — प्रत्येक छात्र के पास एक विवरण पुस्तिका होती है, जिसमें वे कार्य का लेखा दर्ज करते हैं। इसमें शिक्षक यह देखता है कि बालक ने निर्धारित कार्य पूरा कर लिया है या नहीं। अन्त में कार्य का मूल्यांकन किया जाता है।
6. **कार्य का निर्णय या मूल्यांकन**— इस पद में अध्यापक तथा छात्र परस्पर मिलकर निर्णय लेते हैं कि प्रायोजना पूर्ण करने में कहां तक सफलता मिली है। वे स्वयं निरीक्षण परीक्षण द्वारा देखते हैं और समझते हैं कि उनसे कहां भूल हुई है।

अपनी प्रगति की जाँच करें।

नोट —

- (अ) अपना उत्तर प्रश्न के नीचे दिये गये रिक्त स्थान में लिखिए।
- (ब) अपने उत्तर की जाँच इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से कीजिए।
- (1) प्रयोजन विधि के प्रवर्तक कौन थे ?
.....
- (2) प्रदर्शन विधि के कौन कौन से पद हैं।
.....
.....

1.8 खेल व खेल प्रणाली (PLAY AND PLAY WAY)

सामान्य स्वाभाविक प्रवृत्तियों में खेल की प्रवृत्ति सबसे अधिक व्यापक और महत्वपूर्ण हैं। 'खेल' का सामान्य अर्थ है – 'चित्त की उमंग या मन-बहलाव या व्यायाम के लिए इधर-उधर उछल-कूद, दौड़-धूप या कोई साधारण कार्य। मनोवैज्ञानिकों ने 'खेल' का अर्थ निम्न प्रकार से व्यक्त किया है –

1. **मैक्डूगल**— “खेल स्वयं अपने लिए की जाने वाली एक क्रिया है, या खेल एक निरुद्देश्य क्रिया है, जिसका कोई लक्ष्य होता है।”
2. **हरलॉक**— “अन्तिम परिणाम का विचार किये बिना कोई भी क्रिया जो उससे प्राप्त होने वाले आनन्द के लिए की जाती है, खेल है।”
3. **क्रो व क्रो**— “खेल की उस क्रिया के रूप में परिभाषा की जा सकती है, जिसमें एक व्यक्ति उस समय व्यस्त होता है, जब वह उस कार्य को करने के लिए स्वतंत्र होता है, जिसे वह करना चाहता है।”

1.8.1 खेल खिलाना

बच्चों के सब खेलों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है— (1) वैयक्तिक, और (2) सामूहिक। इन दोनों प्रकार के खेलों के आधार पर कार्ल ग्रूस ने बालकोपयोगी खेलों का विस्तृत वर्णन किया है। उनमें से पाँच प्रकार के खेले अधिक महत्वपूर्ण हैं –

1. **परीक्षात्मक खेल**— इस प्रकार के खेलों में बालक, वस्तुओं को उलट-पलट कर देखता है या उनका परीक्षण करता है। इन खेलों का आधार जिज्ञासा की प्रवृत्ति है। ये खेल वैयक्तिक होते हैं।
2. **गतिशील खेल**— इस प्रकार के खेलों में दौड़-भाग, उछल-कूद आदि आते हैं। ये खेल, शरीर की गति का विकास करते हैं। ये खेल वैयक्तिक और सामूहिक— दोनों प्रकार के होते हैं।
3. **रचनात्मक खेल**— इस प्रकार के खेलों में बालक विभिन्न वस्तुओं का निर्माण करता है, जैसे—रेत या मिट्टी के पहाड़, घर, टीले आदि बनाना और बिगाड़ना। इन खेलों का आधार, रचनात्मकता की प्रक्रिया है। ये खेल वैयक्तिक और सामूहिक—दोनों प्रकार के होते हैं।
4. **लड़ाई के खेल**— इस प्रकार के खेलों में हार-जीत के खेलों को स्थान दिया जाता है, जैसे—हॉकी, कबड्डी, फुटबाल, मुक्केबाजी आदि। इन खेलों का सामान्य आधार, प्रतियोगिता होती है। ये खेल साधारणतः सामूहिक होते हैं।

5. बौद्धिक खेल— इस प्रकार के खेलों का सम्बन्ध बुद्धि से होता है, जैसे— गणित के सवाल आदि। ये खेल, बुद्धि का विकास करते हैं। ये वैयक्तिक और सामूहिक— दोनों प्रकार के होते हैं।

उदाहरण— गणित के सवाल सिखाने से पहले विद्यार्थियों को गिनती सिखाते हैं।

एक विद्यार्थी इसमें 1 विद्यार्थी को और मिलाया, 2 विद्यार्थी,

2 के बाद 2 को और मिलाया तो 4 विद्यार्थी,

4 के बाद 4 को और मिलाया तो 8 विद्यार्थी

8 के बाद 2 को और मिलाया तो 10 विद्यार्थी

कई दिन तक खेल खेल में सिखाने से विद्यार्थी गिनती सीख जाते हैं।

अब 2 विद्यार्थी है + का निशान लगाकर 2 विद्यार्थी और मिलाये तो 4 विद्यार्थी हो जायेगे। इस तरह विद्यार्थी जोड़ लगाना सीख जाता है।

1.8.2 खेल के सिद्धांत

बालक में खेलने की प्रवृत्ति क्यों पाई जाती है ? वह क्यों खेलता है और क्यों खेलना चाहता है ? इन प्रश्नों पर विद्वानों और मनोवैज्ञानिकों ने विचार करके कुछ सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है, जिनमें से मुख्य निम्नांकित हैं —

1. अतिरिक्त शक्ति का सिद्धांत— यह सिद्धांत सम्भवतः सबसे प्राचीन है। इसके प्रतिपादक, जर्मन कवि शीलर और अंग्रेज दार्शनिक हरबर्ट स्पेंसर माने जाते हैं। इसलिए, इस सिद्धांत को 'शीलर व स्पेंसर का सिद्धांत' भी कहा जाता है। बालक को निरंतर और निरुद्देश्य खेलते देखकर, इन विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला कि वह कार्य से बची हुई अपनी शक्ति का खेल में प्रयोग करता है। इसकी पुष्टि करते हुए नन ने लिख है— "खेल साधारणतः अतिरिक्त शक्ति का प्रदर्शन माना जाता है।"

आधुनिक युग में इस सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया जाता है। स्किनर एवं हेरीमन के अनुसार, इसके तीन कारण हैं— (1) बीमार बालक में अतिरिक्त शक्ति नहीं होती है, फिर भी वह खेलता है, (2) बहुत-से खेल अतिरिक्त शक्ति चाहने के बजाय शक्ति प्रदान करते हैं, (3) विकास की विभिन्न अवस्थाओं में बालक की खेल-सम्बन्धी रुचियाँ बदल जाती हैं।

2. पूर्व-अभिनय का सिद्धांत- इस सिद्धांत का प्रतिपादक मालब्रेंस और मुख्य समर्थक, स्विट्जरलैंड का मनोवैज्ञानिक कार्ल ग्रूस आन्तरिक प्रवृत्ति होती है। गुड़िया से खेलने वाली बालिका अज्ञात रूप से बच्चे की देखभाल करने का प्रशिक्षण प्राप्त करती है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक यह तो मानते हैं कि बालक में खेलने की आन्तरिक प्रवृत्ति होती है, पर वे यह नहीं मानते हैं कि वह खेल द्वारा अज्ञात रूप में वयस्क जीवन की तैयारी करता है। स्किनर एवं हैरीमन के अनुसार उनका तर्क यह है – “बालक खेल के द्वारा अनेक बातें सीखता है, पर वह ज्ञात या अज्ञात रूप से सीखने के लिए नहीं खेलता है।”

3. पुनरावृत्ति का सिद्धांत- इस सिद्धांत का प्रतिपादक जी. स्टेनले हॉल है। उसके अनुसार, बालक अपने खेलों में प्रजातीय अनुभवों की पुनरावृत्ति करता है। दूसरे शब्दों में, वह अपने खेलों द्वारा अपने पूर्वजों के उन सब कार्यों को दोहराता है, जो वे आदि काल से करते चले आ रहे हैं। इस प्रकार के कुछ कार्य हैं— दौड़ना, लड़ना, पत्थर फेंकना, वृक्षों पर चढ़ना आदि।

इस सिद्धांत को कुछ समय तक स्वीकार किया गया, पर अब त्याग दिया गया है। इसका कारण बताते हुए क्रो व क्रो ने लिखा है— “अब यह विश्वास नहीं किया जाता है कि बालक अर्जित लक्षणों और विशेषताओं को वंशानुक्रम से प्राप्त करते हैं।”

4. मूलप्रवृत्ति का सिद्धांत- इस सिद्धांत का प्रतिपादक, मैक्डूगल है। उसके अनुसार, खेल का कारण मूलप्रवृत्तियों की परिपक्वता है। दूसरे शब्दों में, जब मूलप्रवृत्तियाँ अपने समय से पहले परिपक्व हो जाती हैं, तब उनकी अभिव्यक्ति खेल द्वारा होती है। मैक्डूगल के मूलप्रवृत्तियों के सिद्धांत की मान्यता कम होने के कारण इस सिद्धांत की मान्यता भी कम हो गई है।

5. पुनः प्राप्ति का सिद्धांत - इस सिद्धांत का प्रतिपादक बर्लिन-निवासी लाजारस और समर्थक जी.टी. डब्ल्यू. पैट्रिक हैं। इस सिद्धांत के अनुसार, खेल द्वारा शक्ति की पुनः प्राप्ति होती है। खेल इसलिए खेला जाता है, जिससे कि व्यक्ति उस शक्ति को फिर से प्राप्त कर ले, जो उसने अपने कार्य करते समय थकने के कारण नष्ट कर दी है। इसलिए, बालक, कार्य करने के बाद खेलना चाहता है। इस सिद्धांत को अस्वीकार करने का कारण बताते हुए बी.एन. झा ने लिखा है— “बालक केवल खेल के लिए अनेक प्रकार के खेल खेलते हैं। यह सिद्धांत हमें इसका कोई कारण नहीं बताता है।”

खेल, कार्य से विश्राम देता है। इसलिए, इस सिद्धांत को 'विश्राम-सिद्धांत' भी कहते हैं।

6. परिष्कार का सिद्धांत— शब्द यूनानी दार्शनिक, अरस्तू की एक पुस्तक से लिखा गया है। इसका अर्थ है 'परिष्कार' या 'शुद्धि'। बालक, वंशानुक्रम के द्वारा अपने जंगली पूर्वजों की प्रवृत्तियों प्राप्त करता है। खेल इनको बाहर निकालने या बालक का परिष्कार करने का एक साधन है। रॉस का कथन है— "खेल की क्रिया परिष्कार करती है। यह कुछ अवरुद्ध प्रवृत्तियों और संवर्गों को बाहर निकालने का मार्ग प्रदान करती है, जिनको बाल्यकाल या वयस्क-जीवन में पर्याप्त प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति नहीं मिल सकती है।"

हमने खेल के जिन सिद्धांतों की चर्चा की है, वे खेल की व्याख्या अवश्य करते हैं, पर यह व्याख्या अपूर्ण और एकांगी है। इसलिए, आधुनिक युग में इनमें से किसी को भी स्वीकार न किया जाकर जॉन डीबी के सिद्धांत को साधारणतः स्वीकार किया जाता है। उसने खेल को जीवन मानकर जीवन की क्रियाशीलता का सिद्धांत प्रतिपादित किया है। क्रो व क्रो के अनुसार, उसका विश्वास है— "क्रियाशीलता जीवन का सार है। व्यक्ति की क्रिया अनेक रूपों में व्यक्त की जा सकती है। बालक के जीवन का मुख्य कार्य खेल है।" इस प्रकार ड्यूवी ने खेल की व्याख्या— जीवन की क्रियाशीलता के आधार पर की है।

1.8.3 शिक्षा में खेल—प्रणाली

यद्यपि 'खेल प्रणाली' का जन्मदाता, फावेल को माना जाता है, पर आधुनिक युग में अध्यापक ने बालक को शिक्षा देने के लिए इस प्रणाली को प्रबल समर्थन दिया। इस प्रणाली में अपना दृढ़ विश्वास प्रकट करते हुए वे कहते हैं— "मेरा दृढ़ विश्वास है कि केवल वही कार्य करने के योग्य है, जो वास्तव में खेल है, क्योंकि खेल से मेरा अभिप्राय किसी कार्य को पूर्ण हृदय से करना है।"

शिक्षक ने बताया कि बालक, कार्य को पूर्ण हृदय से तभी करता है, जब वह खेल में होता है। अतः उसमें प्रत्येक कार्य के लिए खेल की विधि को अपनाना अनिवार्य है। खेल द्वारा किये जाने वाले कार्य से बालक की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक शक्तियाँ क्रियाशील होती हैं। उसके कार्य और विचार में सामंजस्य स्थापित होता है और वह प्रगति के पथ पर अग्रसर होता है। इस प्रकार शिक्षक ने शिक्षण की एक नई विधि आरम्भ की, जिसे 'खेल-विधि' या 'खेल-प्रणाली' कहा जाता है। इस 'विधि' का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है — "वह विधि, जो

बालकों को उसी उत्साह से सीखने की क्षमता देती हैं, जो उनके स्वाभाविक खेल में पाई जाती है, प्रायः खेल-विधि कहलाती है।”

1.8.4 खेल विधि पर आधारित शिक्षण पद्धतियाँ

हम खेल-विधि पर आधारित मुख्य शिक्षण-विधियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं यथा –

1. किंडरगार्टन पद्धति – यह पद्धति फ्रोबेल द्वारा प्रतिपादित की गई है। इस पद्धति में बालक को खेल-गीतों और उपहारों द्वारा शिक्षा दी जाती है। इन गीतों के आधार शिशु-खेल और शिशु-कार्य हैं। उपहारों में नाना प्रकार की वस्तुएँ हैं, जैसे— ऊन की गेंदे, लकड़ी का गेला, तिकोना तख्तियाँ, चतुर्भुज आदि।

2. मॉण्टेसरी पद्धति—यह पद्धति मेरिया मांतेसरी द्वारा प्रतिपादित की गई है। इस पद्धति में बालक विभिन्न प्रकार के उपकरणों से खेलकर अक्षरों, अंकगणित, रेखागणित आदि का ज्ञान प्राप्त करता है। खेल ही उसकी ज्ञानेन्द्रियों को प्रतिक्रिया करता है।

3. ह्यूरिस्टिक पद्धति – यह पद्धति आर्म्सट्रांग द्वारा प्रतिपादित की गई है। इस पद्धति में बालक-शिक्षक, यन्त्रों और पुस्तकों की सहायता से सव्यं ज्ञान का अर्जन करता है। नन का कथन है – “क्योंकि . ह्यूरिस्टिक पद्धति का उद्देश्य—बालक को मौलिक अन्वेषण की स्थिति में रखना है, इसलिए यह स्पष्ट रूप से खेल-विधि है।”

4. प्रोजेक्ट पद्धति— यह पद्धति किपेट्रिक द्वारा प्रतिपादित की गई है। इस पद्धति में बालक किसी योजना को व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से पूर्ण करता है, जैसे—मॉडल बनाना, अभिनय करना, कहानी पढ़ना या सुनाना आदि।

5. डाल्टन पद्धति— यह पद्धति मिस हेलेन पार्कहर्स्ट द्वारा प्रतिपादित की गई है। इस पद्धति के अनुसार कार्य करते समय बालक के ऊपर समय-सारणी, कक्षा-नियमों, वार्षिक और अर्द्ध-वार्षिक परीक्षाओं एवं विभिन्न विषयों के निर्दिष्ट घण्टों का कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया जाता है।

अपनी प्रगति की जाँच करें।

नोट –

(अ)	अपना उत्तर प्रश्न के नीचे दिये गये रिक्त स्थान में लिखिए।
(ब)	अपने उत्तर की जाँच इकाई के अन्त में दिये गये उत्तर से कीजिए।
(1)	<p>खेल विधि के सिद्धांत एवं उनके प्रतिपादकों के नाम लिखो ?</p> <p>.....</p> <p>.....</p> <p>.....</p> <p>.....</p> <p>.....</p> <p>.....</p>
(2)	<p>हारिस्टिक शब्द का क्या अर्थ है ?</p> <p>.....</p> <p>.....</p>

1.9 खोज (हारिस्टिक) विधि

इस विधि की खोज प्रो. एच. ई. आर्मस्ट्रांग ने की थी। इसका प्रयोग विज्ञान विषय को पढ़ाने के लिए किया गया था, किन्तु इसकी उपयोगिता के कारण मनोविज्ञान में भी इसका प्रयोग आवश्यक समझा गया। जैसा कि हारिस्टिक ग्रीक भाषा के शब्द से विदित है, हारिस्टिक शब्द जिसका अर्थ है 'खोज करना' या 'मालूम करना'। इस विधि में बालक को कुछ नहीं बताया जाता, बालक स्वयं ही सक्रिय रहकर अपनी समस्या का समाधान करते हैं। इस प्रकार छात्र अन्वेषक के रूप में कार्य करते हैं। यह विधि शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके द्वारा छात्रों में मनोवैज्ञानिक और गणितीय दृष्टिकोण उत्पन्न होता है।

अनुसन्धान की विधि का प्रयोग कैसे करे ? इस विधि की प्रक्रिया का केन्द्र विद्यार्थी होता है। वह पूर्व-ज्ञान, निरीक्षण, परीक्षण, चिन्तन एवं तर्क-वितर्क आदि द्वारा खोज करता है तथा स्वयं को शिक्षित करने का प्रयास करता है। इस विधि में शिक्षक विद्यार्थियों के सम्मुख समस्याएं प्रस्तुत करता है तथा छात्र स्वयं अपने प्रयासों द्वारा इनका हल ज्ञात करते हैं। इन समस्याओं को विद्यार्थियों के समक्ष पाठ्य-पुस्तकों या अन्य साधनों द्वारा भी प्रस्तुत किया जा सकता है। इस विधि में अध्यापक का कार्य विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना है तथा उनको सामग्री, उपकरण आदि साधनों को उपलब्ध कराना है, जिनका उपयोग छात्र समस्याओं को हल करने में करते हैं। अध्यापक छात्र को मार्ग-दर्शन प्रदान करता है, जिससे वे नवीन नियमों, हलों तथा सम्बन्धों की स्वयं अपने प्रयत्नों द्वारा खोज कर सकें। इस विधि की पूरी उपयोगिता तभी दृष्टिगत होगी, जब हम पाठ्य सामग्री से सम्बन्धित नियमों आदि की खोज में विद्यार्थियों की आयु, योग्यता तथा क्षमता का पूर्णरूपेण ध्यान रखें।

1.9.1 हारिस्टिक विधि से छात्रों को पढ़ाने की विधि

'हारिस्टिक' शब्द एक ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ— 'खोज'। इस विधि में बालक स्वयं खोज करता है। उसको कुछ बताया नहीं जाता है। वह स्वयं सक्रिय रहता है। इस विधि में छात्र स्वयं ज्ञान की खोज करता है। इसमें अध्यापक कम से कम ज्ञान देता है। परन्तु माध्यमिक कक्षाओं में बच्चों की योग्यताओं का विकास इस सीमा तक नहीं हो पाता है कि वे स्वयं कोई वास्तविक खोज कर सकें, फिर भी उनको इस विधि में पर्याप्त मात्रा तक स्वतंत्रता होती है कि छात्र स्वयं कार्य करे तथा

शिक्षक समय-समय पर उनको सहायता दें तथा प्रश्नों के आधार पर ज्ञान दें। इस विधि में आने वाली पुस्तकें भी हासिटक विधि से होनी चाहिए ताकि छात्र उस विधि से कार्य कर सके।

1.9.2 खोज विधि के निम्न गुण है :

- 1 इस विधि में बालक स्वयं कियाशील होते हैं और उनको सोचने का अवसर मिलता है।
- 2 इस विधि में बालक को विषय का सही ज्ञान होता है। एक विद्यार्थी जो स्वयं किसी समस्या को हल करता है उसको समस्या कैसे उत्पन्न हुई कठिनाइयों का ज्ञान हो जाता है जिससे समस्या आसानी से हल हो सकती है।
- 3 इस विधि में बालकों की रुचि तथा कार्य करने की इच्छा दोनों अन्य विधियों की अपेक्षा अधिक होती है।
- 4 अध्यापक इस विधि में प्रत्येक बालक के सम्पर्क में आता है जिससे प्रत्येक बालक ही मानसिक क्षमता को समझा जा सकता है।
- 5 इस विधि में घर पर अध्ययन अन्य विधियों की अपेक्षा सरल तथा कम खर्च में होता है।

1.10 रचनावाद उपागम (Constructive Apprpach)

रचनावाद के अनुसार सीखना केवल ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं है बल्कि यह एक प्रक्रिया है, जिसमें सीखने वाला स्वयं करके, मानसिक रूप से संलग्न रहकर सीखता है। वह अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर ज्ञात अनुभवों को नये अनुभवों के साथ जोड़कर स्वयं का ज्ञान एवं समझ विकसित करता है। इस उपागम में सीखने वाला स्वयं अपने पूर्व प्राप्त अनुभवों के आधार पर समझ विकसित करता है, उस पर चिन्तन करता है और अपने ज्ञान को पुनः संगठित करता है। निर्माणवाद मानता है कि ज्ञान व्यक्तिगत होता है, जो कि अनुभवों के आधार पर विकसित होता है। परिस्थितियां ज्ञान के निर्माण में सहायक होती हैं और बाधा भी होती हैं। नये अनुभवों के आधार पर मास्तिष्क ज्ञान का परीक्षण करता है और आवश्यकता होने पर इनमें सुधार भी करता है।

1.11 पृच्छा विधि (Inquiry Method)

पृच्छा का अर्थ जॉच पडताल या पूछताछ इन शब्दों में पृच्छा शब्द ही अधिक उपयुक्त है।

यहाँ मानव की प्रगति का मूल कारण जिज्ञासा अर्थात् पृच्छा ही है। मानव जाति ने जबसे वन छोड़ धरती पर अपना पैर रखा है। तभी से अपने चारों ओर के वातावरण को कोतूहल की दृष्टि से देखता आया है तथा वह अपनी प्रकृति के प्रति अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति के चलते उसे समझने तथा नियंत्रित करने का प्रयास करता आया है। निश्चित रूप से मानव की जिज्ञासा की शक्ति असीमित है अर्थात् जैसे ही मानव के सामने उसके जिज्ञासु प्रवृत्ति के चलते कोई समस्या सामने आती है वैसे ही मानव की समस्त शारीरिक तथा मानसिक शक्तिया उस समस्या के समाधान के प्रयास के लिए एकजुट हो जाती है। कठिन परिश्रम के उपरान्त वह समस्या के समाधान में सफल भी हो जाता है। पृच्छा मानव की एक विशेषता है। मानव अपनी पृच्छा के कारण ही अपने ज्ञान में वृद्धि करता आया है। पृच्छा के कारण ही मानव का अस्तित्व ही इस पृथ्वी पर आज तक विद्वान है। पृच्छा का जन्म ही संशय तथा कोतूहल से होता है। मानव प्राकृतिक शक्तियों को कोतूहल तथा पृच्छा (जिज्ञासा) की दृष्टि से देखता आया है तथा अपनी इस पृच्छा के कारण ही आज उसने काफी बड़ी सीमा तक प्राकृतिक शक्तियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर लिया है। हम यहाँ कह सकते हैं कि यदि मानव की पृच्छा की प्रवृत्ति नहीं होती तो वह आज प्राकृतिक शक्तियों के विषय में इतना ज्ञान नहीं रख पाता। पृच्छा अपनी किसी भी रूप में सकारात्मक अथवा नकारात्मक हो सकती है। मानव जब अपनी पृच्छा की प्रवृत्ति के चलते अपनी समस्त शक्ति जिज्ञासा के समाधान में लगा देता है। तो वह ज्ञान की प्राप्ति कर लेता है। पृथ्वी पर यह क्रम हजारों वर्षों से चलता आया है तथा आगे भी यह क्रम जब तक जारी रहेगा। जब कि मानव का अस्तित्व इस पृथ्वी पर बना रहेगा।

1.11.1 पृच्छा विधि के उपयोग में आने वाले उपकरण।

इसके अन्तर्गत वे सभी उपकरण सम्मिलित होते हैं, जिससे कि कोई सूचना प्राप्त हो रही है। इसका प्रारूप प्रश्न तथा कथन का होता है, इसमें निम्नलिखित उपकरण सम्मिलित किये जाते हैं –

1. प्रश्नावली – व्यक्तियों से सूचना प्राप्त करने के लिए बनाये गये प्रश्नों की कमबद्ध सूची को प्रश्नावली कहते हैं, जिसे कि डॉक द्वारा भेजकर सूचना एकत्रित की जाती है।

2. अनुसूची – गुड तथा हेड के अनुसार अनुसूची सामान्यतया उन प्रदत्तों के समूह को कहते हैं जो कि साक्षात्कारकर्ता द्वारा दूसरे व्यक्ति के आमने- सामने बैठक पूछे या लिखे जाते हैं।

3. चिन्हांकन सूची – चेक लिस्ट पदों की एक सूची है। उत्तरदाता के लिए चिन्हित करने के लिए वर्गों के एक समूह के रूप में वह एक प्रकार की प्रश्नावली है। अध्ययन किये जाने वाले तथ्यों की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के आलेखन हेतु इसको प्रयुक्त किया जाता है इस प्रकार चेक लिस्ट के पदों के उत्तर निर्णय की वस्तु नहीं, वरन् वे तो लक्ष्य मात्र होते हैं। इस उपकरण के प्रयोग का प्रमुख लाभ यह है कि निरीक्षणों का आलेखन सुव्यस्थित एवं सरलीकृत होता है तथा निरीक्षित किये गये तथ्य एवं कार्य के समस्त महत्वपूर्ण पक्षों के विषय में विचार करने के लिए सामग्री उपलब्ध हो जाती है।

4. निर्धारण मापनी – वार तथा अन्य के अनुसार किसी भी परिस्थिति वस्तु या व्यक्ति के संबंध में मत अथवा निर्णय देने की विधि को निर्धारण मापनीय कहते हैं, जिसमें सामान्यतया मत को किसी मूल्य मापक के आधार पर व्यक्त करते हैं।

5. अभिवृत्ति मापनी – मत एवं अभिवृत्ति मापन व वर्णन अनुसंधान का एक रोचक विषय है। जहाँ कि व्यक्तियों के व्यक्त मतों के आधार पर दत्त एकत्रित किये जाते हैं।

व्यक्तियों एवं जन समूह की किसी तथ्य के प्रति अभिवृत्ति एवं विचार जाने के लिये जो प्रपत्र प्रयोग किया जाता है वह मतावली अथवा अभिवृत्ति मापनी कहलाता है।

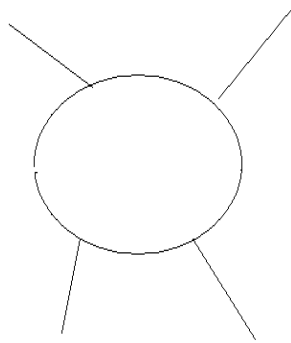
1.12 आगमन उपागम (Inductive Approach)

आगमन विधि में मनोविज्ञान के नियमों एवं सिद्धांतों का विकास सामान्यानुमान अर्थात् स्कूल तथ्यों के आधार पर विशेष नियम या सिद्धांत प्रतिपादित किये जाते हैं। युंग के अनुसार –“हम विशिष्ट से सामान्य या स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होते हैं। लेडन के अनुसार—“जब हम बालकों के सम्मुख बहुत से तथ्य, उदाहरण या वस्तुएं प्रस्तुत करते हैं और फिर उनसे अपने स्वयं के निष्कर्ष निकलवाने का प्रयत्न करते हैं, तब हम शिक्षण की आगमन प्रणाली का प्रयोग करते हैं।

1.12.1 आगमन विधि की प्रक्रिया

- (1) आवश्यक उदाहरण प्रस्तुत करना।
- (2) उदाहरण के आधार पर सम्भावित नियम निकालना।
- (3) नियमों की सत्यता निर्धारित करना।
- (4) नियमों की सत्यता की पुष्टि करना।

अध्यापक छात्रों के सम्मुख एक ही प्रकार के विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत करता है। पुनः उदाहरणों के आधार पर तुलना एवं समानता का प्रयोग कराके उदाहरणों का निरीक्षण करवाकर निष्कर्ष निकलवाने का प्रयास करता है। उदाहरण के आधार पर किसी सामान्य नियम का निर्धारण करता है। पुनः अन्य उदाहरणों की सहायता से निकाले गये नियम की कसौटी पर कसता है।



इस विधि का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया जाता है, क्योंकि इसकी निम्नलिखित विशेषताएं हैं। इस विधि में बालक स्वयं खोज द्वारा सीखता है। यह विधि मनोविज्ञान की रोचक एवं मनोवैज्ञानिक विधि है। यह विधि छात्रों में तार्किक दृष्टिकोण उत्पन्न करती है तथा आत्म-विश्वास जाग्रत करती है। यह विधि नवीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए उत्साहित करती है। यह निरीक्षण शक्ति का विकास करती है। इस विधि के द्वारा छात्र सरलता से नियम या सिद्धांत का निर्माण कर सकते हैं। इस विधि में छात्र स्वयं प्रयास द्वारा ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, जिससे मानसिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। इस विधि में चूंकि बालक नियम की पुष्टि उदाहरणों द्वारा करता है, अतः प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है। इसके प्रयोग करने से भावी जीवन में खोज करने की प्रेरणा को जन्म मिलता है। इससे छात्र स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होता जाता है, अतः यह रोचक एवं सरल विधि है।

1.12.2 आगमन विधि का महत्व

आगमन विधि का महत्व निम्नांकित है—

- (1) यह विधि स्वयं खोज पर आधारित है। बालक स्वयं खोजकर निष्कर्ष निकालता है तथा सक्रिय भी रहता है।
- (2) इस विधि में आत्म-विश्वास जाग्रत होता है, क्योंकि वह स्वयं हल निकालता है, इसलिए उसमें आत्म-विश्वास जाग्रत होता है।
- (3) इस विधि में चेतना एवं जिज्ञासा उत्पन्न होती है। बालक के सामने नवीन समस्या रखी जाती है। वह उसका हल खोजता है या खोजने का प्रयास करता है।
- (4) यह विधि क्रियाशीलता के सिद्धांत पर आधारित है, छात्र समस्या का हल करने में क्रियाशील रहते हैं।
- (5) छात्रों द्वारा इस विधि का प्रयोग करने से उसमें मानसिक शक्ति का विकास होता है अर्थात् छात्र में सोचने, विचारने, अवलोकन करने एवं परीक्षण कर निर्णय लेने की क्षमता का विकास होता है।

1.13 निगमन उपागम (Deductive Approach)

निगमन विधि में छात्रों को पहले नियम बता दिया जाता है, तत्पश्चात् उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है। अन्य शब्दों में निगमन विधि में नियम या सिद्धांत की पुष्टि उदाहरणों के माध्यम से की जाती है। यह आगमन विधि के विपरीत है। शिक्षक बालकों के सामने नियम या सिद्धांत प्रस्तुत कर उन्हें रटा देता है पश्चात् उदाहरणों द्वारा उनकी पुष्टि करता है अर्थात् यह विधि सामान्य नियम से विशेष या सूक्ष्म से स्थूल की ओर इंगित करती है।

विभिन्न विद्वानों ने निगमन विधि की परिभाषाएं इस प्रकार दी हैं –

1. लेडन के अनुसार— “निगमन विधि द्वारा शिक्षण में पहले परिभाषा या नियम सिखाया जाता है। तत्पश्चात् उसके अर्थ का सावधानी से स्पष्टीकरण किया जाता है और अन्त में तथ्यों का प्रयोग करके उसे पूर्णतया स्पष्ट किया जाता है।”

2. एस के अग्रवाल अनुसार – इस विधि में शिक्षक बालकों को पहले ‘सामान्य नियम’ बता देता है और फिर एक उदाहरण लेकर उस नियम की सत्यता सिद्ध करता है। दूसरे शब्दों में ‘सामान्य नियम’ को विशेष उदाहरणों में प्रयोग किया जाता है और नियम की सत्यता की पुष्टि की जाती है।

निगमन विधि के निम्नांकित पद होते हैं –

- सिद्धांत या नियम सर्वप्रथम अध्यापक छात्रों को सिद्धांत या नियम बतादेता है
- सिद्धांत या नियम या उदाहरण देना छात्रों को बताये गये नियम या सिद्धांत की सत्यता सिद्ध करने के लिए अध्यापक विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत करता है।
- निष्कर्ष निकालना छात्र उदाहरणों के माध्यम से निष्कर्ष निकालते हैं।
- सत्यापन अन्त में उदाहरणों द्वारा निकाले गये निष्कर्ष की सहायता से सत्यता का परीक्षण करते हैं।
- इस विधि के पाठन में छात्र परिश्रम करता है, अतः ज्ञान प्राप्ति श्रम के द्वारा होती है, जिससे आत्म-विश्वास जाग्रज होता है।
- इस विधि में छात्र एवं अध्यापक दोनों की शक्ति का अपव्यय नहीं होता ।
- यह विधि उचित एवं संक्षिप्त विधि है, क्योंकि केवल सूत्र द्वारा ही हल निकाला जा सकता है।
- सभी विषयों में इस विधि का प्रयोग सम्भव है।
- यह विधि उच्च कक्षाओं के लिए उचित व प्रभावशाली है।
- यह विधि सामूहिक शिक्षण के लिए उपयुक्त है।
- इस विधि से छात्र में स्वयं की आदत का विकास होता है।

1.13.1 अध्यापकों को सुझाव— आगमन विधि के गुण तथा दोषों को ध्यान में रखते हुए अध्यापकों को इस विधि का प्रयोग करने हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये जाते हैं —

- (1) आगमन तथा निगमन विधियाँ एक-दूसरे की विरोधी नहीं हैं, वरन् एक-दूसरे की पूरक हैं। अध्यापक को आगमन विधि पर बल देना चाहिए, किन्तु जहाँ पर यह विधि सफल नहीं हो वहाँ पर निगमन विधि का प्रयोग करना चाहिए।
- (2) मनोविज्ञान को रुचिकर, उपयोगी तथा व्यावहारिक बनाने के लिए यथासम्भव आगमन विधि को काम में लाया जाय।
- (3) पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण में आगमन विधि को आधार बनाया जाय जिससे कक्षाध्यापन में सहायता मिल सके तथा विद्यार्थी स्वाध्याय द्वारा लाभ उठा सके।
- (4) आगमन विधि से सिद्धांत, नियम, सूत्र एवं सम्बन्ध आदि ज्ञात किये जाते हैं तथा निगमन विधि से सम्बंधित उपनियम की समस्याओं को हल किया जाता है।
- (5) जो ज्ञान छात्र स्वयं प्रत्यक्ष उदाहरणों तथा तथ्यों से प्राप्त किया करते हैं, वह उनके लिए सदैव उपयोगी बना रहता है। (6) निगमन विधि को पूर्ण रूप से त्यागा नहीं जा सकता। इस विधि का भी उन स्थलों पर प्रयोग किया जाय, जहाँ आगमन विधि का प्रयोग सम्भव नहीं है।
- (7) प्रत्येक उपनियम के अनेक प्रत्यक्ष उदाहरण एकत्रित कर आगमन विधि का सफलता से प्रयोग किया जा सकता है।
- (8) अध्यापक स्वयं विषय सामग्री की आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर ही विधि के चयन के बारे में निर्णय करे।
- (9) उच्च कक्षाओं में निगमन विधि का उपयोग किया जाता है, किन्तु विषय सामग्री के सूक्ष्म और कठिन स्थलों का अध्यापन जहाँ तक सम्भव हो, आगमन विधि द्वारा किया जाय।

1.13.2 निगमन विधि का महत्व

मनोविज्ञान शिक्षण में निगमन विधि का महत्व निम्नांकित रूपों में दृष्टिगोचर होता है —

- (1) यह विधि अल्प आयु के बालकों के लिए उपयोगी है।
- (2) इस विधि की खोज की क्रिया लम्बी है, इसमें छात्र पाठ रट नहीं पाते हैं।

- (3) इस विधि में कम समय में अधिक सीखा जा सकता है, अतः यह विधि उपयोगी है।
- (4) यह विधि स्मरण शक्ति को बढ़ाती है क्योंकि इसमें प्रश्न याद रखना पड़ता है।
- (5) इस विधि में बालक एवं अध्यापक दोनों ही सक्रिय रहते हैं।

मनोविज्ञान शिक्षण में परिस्थिति विशेष को ध्यान में रखते हुए विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है। उनमें से मनोविज्ञान के नियमों के सम्बन्ध में शिक्षण के समय आगमन अथवा निगमन विधियों का प्रयोग किया जाता है।

1.13.3 विद्यार्थियों से आगमन तथा निगमन विधियों की तुलना करवाना।

आगमन तथा निगमन विधि के अंतर को निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता —

क्र.	आगमन विधि	निगमन विधि
1.	इस विधि में उदाहरणों के माध्यम से नये नियम या सिद्धांत निकाले जाते हैं।	इस विधि में नियम या सिद्धांत पूर्व में ही बता दिया जाता है, पुनः उदाहरणों द्वारा हल कराया जाता है।
2.	इस विधि में ज्ञात से अज्ञात की ओर अग्रसर होते हैं।	इस विधि में छात्र अज्ञात से ज्ञात की ओर अग्रसर होते हैं।
3.	इस विधि में छात्र विशिष्ट से सामान्य की ओर अग्रसर होते हैं।	इस विधि में छात्र सामान्य से विशिष्ट की ओर अग्रसर होते हैं।
4.	इस विधि में छात्र स्थूल से सूक्ष्म की ओर अग्रसर होते हैं।	इस विधि में सूक्ष्म से स्थूल की ओर अग्रसर होते हैं।

मनोविज्ञान हेतु शिक्षण-विधियों का महत्व

- (1) छोटी कक्षाओं (प्राथमिक स्तर) पर खेल विधि का प्रयोग एक अच्छा उत्प्रेरण एवं मनोरंजन है। इसके द्वारा बालक को कठिन से कठिन बात आसानी से समझायी जा सकती है। सुस्त बालक को भी सक्रिय बनाया जा सकता है।
- (2) इस विधि में कार्य के साथ प्रसन्नता अनुभव होती है और उससे प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।
- (3) बालक में स्वतन्त्रता एवं स्व-अनुशासन को भी बल मिलता है। फलस्वरूप बालक धीरे-धीरे शिक्षित होता रहता है।
- (4) खेल विधि के प्रयोग में बालक की इन्द्रियाँ क्रियाशील होती है तथा बालक पूर्ण जिज्ञासु क्रियाशीलता, अनुकरण एवं सृजनात्मक अभिरूचियों के अनुरूप शिक्षित होता रहता है, जिससे बालक की पढ़ाई में रुचि बनी रहती है एवं उसके पढ़ने में निरन्तरता आती है।
- (6) सहयोग की भावना, स्वावलम्बन व्यावहारिकता एवं जीवनोपयोगी ज्ञान का बीजारोपण होता है।
- (7) निगमन विधि सामान्य से विशिष्ट की ओर, सूक्ष्म से स्थूल की ओर तथा अज्ञात से ज्ञात की ओर चलकर मानसिक शक्ति का विकास करती है।
- (8) आगमन विधि विशिष्ट से सामान्य की ओर स्थूल से सूक्ष्म की ओर ज्ञात से अज्ञात की ओर चलकर मानसिक शक्तियों का विकास करती है।
- (9) विश्लेषण विधि में प्रत्येक पद विधिवत् और तर्कयुक्त होता है। विवेचना पर आधारित न होकर किसी विशेष युक्ति द्वारा प्राप्त होते हैं। संश्लेषण विधि में स्वयं किया अथवा हल खोजे जाते हैं।
- (10) विश्लेषण विधि एक मनोवैज्ञानिक विधि है, इसमें बालक नवीन ज्ञान के प्रति जिज्ञासु रहते हैं। संश्लेषण विधि अवैज्ञानिक विधि है, इसमें स्मृति पर अधिक बल पड़ता है।

1.14 इकाई सारांश

- इकाई नं०-1 मनोविज्ञान की शिक्षण विधियों से संबंधित है, जिसमें व्याख्यान और प्रदर्शन विधि के माध्यम से पाठ को रुचि पूर्ण एवं ज्ञान वर्धक बनाया जाता है।
- योजना विधि और विचार विमर्श के द्वारा किसी पाठ की योजना बनाकर और आपस में बातचीत करके अच्छे परिणाम पाये जा सकते हैं।

- खेल विधि एक महत्वपूर्ण विधि है। खेल खेल में कठिन से कठिन पाठ को सरल बनाया जाता है।
- आगमन और निगमन विधियों का हर विषय में उपयोग होता है। यदि हम किसी बात को उदाहरण के द्वारा समझाते हैं, तो छात्र को एक बार में ही समझ आ जाती है। उदाहरण के साथ हम उसमें नियम और सूत्र लगाते हैं, तब बात समझने में कठिनाई नहीं होती है।

1.15 दीर्घ एवं लघु प्रश्न।

1. व्याख्यान विधि पर संक्षिप्त में विवरण लिखिए ?
2. व्याख्यान और प्रदर्शन विधि के उपयोग से क्या-क्या लाभ होते हैं ?
3. विचार विमर्श विधि के गुण दोषों को संक्षिप्त में वर्णन कीजिए ?
4. खेल विधि से पढ़ाने से पढ़ाई को सरल बनाया जा सकता है, संक्षेप में वर्णन कीजिए ?

लघु प्रश्न

1. ह्यारिस्टिक विधि के जन्मदाता कौन थे ?
2. आगमन और निगमन उपागम में मुख्य अंतर लिखो ?

1.16 इकाई के उत्तरों की जाँच कीजिए।

उत्तर-1 विलियम किल्पेटिक ।

उत्तर-2 प्रदर्शन विधि के पद।

- (i) योजना तैयारी।
- (ii) पाठ का प्रस्तुतीकरण।
- (iii) शिक्षण।
- (iv) प्रयोगीकरण।
- (v) श्याम पट कार्य
- (vi) प्रतिलेखन या परीक्षण

- उत्तर-3 खेल विधि के सिद्धांत
- (i) अतिरिक्त शक्ति का सिद्धांत – जर्मन कवि शीलर, हरवर्ट स्पेन्सर ।
- (ii) पूर्व अभिनय का सिद्धांत – मालब्रेस
- (iii) पुनरावृत्ति का सिद्धांत– स्टेनले हॉल
- (iv) मूल प्रवृत्ति का सिद्धांत – मैकडूगल ।
- (v) पुनः प्राप्ति का सिद्धांत – लाजारस
- (vi) परिष्कार का सिद्धांत – अरस्तू
- उत्तर नं०-4 हारिस्टिक एक ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ है – खोज

1.17 संदर्भ ग्रंथ

1. माहेश्वरी डॉ० बी०के० 2007 जीव विज्ञान शिक्षण, आर०लाल बुक डिपो ।
2. मंगल ए० विज्ञान शिक्षण, स्वाति पब्लिकेशन ।
3. मिश्री, मणिलाल 2011, अग्रवाल पब्लिकेशन ।
4. माथुर, डॉ० एम०एस० 2007-08 अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा ।